आर. रवीन्द्र रेड्डी व अन्य।

अनवान

एच. रमैया रेड्डी व अन्य।

(विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 6286, 2009)

फ़रवरी 17, 2010

[अल्तमस कबीर और साइरियक जोसेफ, जे.जे.]

परिसीमा: वादकारण-भूमि अधिकरण ने 1975 में वाद संपत्तियों के संबंध में अधिभोग अधिकार प्रदान किए -अधिभोग अधिकार प्रदान करने के आदेश को चुनौती देते हुए 2005 में मुकदमा दायर किया गया।' मुकदमा परिसीमा से वर्जित है क्योंकि रिकॉर्ड से पता चलता है कि वादी के पिता को अधिभोग अधिकार दिये जाने का ज्ञान था - भूमि सुधार।

कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961: धारा 132-अधिभोग अधिकारों के संबंध में प्रश्न-सिविल न्यायालय का क्षेत्राधिकार-अभिनिर्धारित: सिविल न्यायालय के पास ऐसे प्रश्न का विनिश्चय करने का क्षेत्राधिकार नहीं है - ऐसा प्रश्न भूमि अधिकरण के क्षेत्राधिकार में है।

'डीएआर', उनके पुत्र, 'पीआर' और पोते 'एचआरआर' की मृत्यु पर, उत्तरदाता संख्या 1 उनकी संपत्ति का उत्तराधिकारी बना। वे दोनों पैतृक

संपत्तियों के संबंध में एक संयुक्त परिवार का गठन करते थे और संपत्तियों के संयुक्त कब्जे में थे। वर्ष 1972 में 'पीआर' और उनके पुत्र 'एचआरआर' वन के बीच संपत्तियों का बंटवारा हुआ। 'एआर' पंजीकृत विभाजन विलेख का प्रमाणित गवाह था। उक्त 'एआर' ने वर्ष 1974 में कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961 की धारा 48 के तहत एक आवेदन दायर किया था, जिसमें इस आधार पर वाद भूमि के संबंध में अधिभोग अधिकारों का दावा किया गया था कि वह वाद भूमि पर खेती कर रहा था। 'पीआर' को एक पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था, लेकिन, 'एचआरआर' को पक्षकार नहीं बनाया गया था, हालांकि संपत्तियां संयुक्त संपत्ति थीं। 11 दिसंबर, 1975 को अधिभोग अधिकार 'एआर' के नाम से दर्ज किए गए।

आदेश में कहा गया कि 'पीआर' 'एआर' के अधिभोग अधिकारों के दावे पर सहमत हो गया था। इस आदेश को 'पीआर' द्वारा कभी भी चुनौती नहीं दी गई कि इसे कपटपूर्वक तरीकों से प्राप्त किया गया था।

वर्ष 1986 में 'पीआर' की मृत्यु के बाद उनकी दूसरी पत्नी ने बंटवारे का मुकदमा दायर किया। पक्षों के बीच एक समझौता हुआ और वर्ष 2004 में मामले का निपटारा कर दिया गया। इस बीच, 1996 में, 'एआर' ने प्रतिवादी संख्या 2 से 5 के पक्ष में कुछ जमीनें विक्रय कर दीं। वर्ष 2005 में, याचिकाकर्ताओं 'एचआरआर' के पुत्रो के कब्जे को विचलित करने के लिए प्रतिवादी संख्या 2 से 5 ने प्रयास किया। याचिकाकर्ताओं ने यह घोषणा करने के लिए मुकदमा दायर किया कि वे 'डीएआर' के अविभाजित

हिंदू संयुक्त परिवार के सहदायिक हैं। उन्होंने यह घोषणा करने के लिए भी प्रार्थना की कि भूमि अधिकरण द्वारा पारित दिनांक 11 दिसंबर, 1975 का आदेश अवैध था इसलिए उन पर और उनकी संपत्तियों के विरासती अधिकार और उनके स्वत्व पर बाध्यकारी नही था

विचारण न्यायालय ने माना कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था और कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961 की धारा 132(2) की रोक के मद्देनजर भी चलने योग्य नहीं था। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के फैसले को बरकरार रखा।

विशेष अनुमति याचिका में, याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि मुकदमा परिसीमा अवधि के भीतर था और उन्हें भूमि अधिकरण द्वारा दिए गए अधिभोग अधिकारों की कोई जानकारी नहीं थी और न ही उनकी सहमति थी; और चूंकि भूमि अधिकरण के समक्ष कार्यवाही कपट और साँठ-गाँठ से दूषित हो गई थी, इसलिए 1961 अधिनियम की धारा 132(2) के तहत रोक मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगी।

न्यायालय ने विशेष अनुमति याचिका खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया

1. भूमि अधिकरण का आदेश 11 दिसंबर, 1975 को पारित किया गया था, जबकि याचिकाकर्ताओं द्वारा वर्ष 2005 में उन संपत्तियों के संबंध में घोषणा, विभाजन और स्थायी निषेधाज्ञा की मांग करते हुए मुकदमा दायर किया गया था जो अधिकरण के आदेश का विषय थे। विचारण

न्यायालय, साथ ही उच्च न्यायालय ने परिसीमा के बिन्दु का मूल्यांकन किया और पाया था कि यह रिकॉर्ड पर था कि 'एआर' द्वारा दायर आवेदन के संबंध में भूमि अधिकरण के समक्ष कार्यवाही की सूचना गांव में दी गई थी। यह भी रिकॉर्ड में था कि याचिकाकर्ताओं के पिता को भूमि अधिकरण के आदेशों के बारे में अच्छी तरह से पता था क्योंकि पहले के मुकदमे में, उन्होंने एक विशिष्ट रुख अपनाया था कि मुकदमे की संपत्तियों में से एक, किराए की संपत्ति थी, और भूमि अधिकरण ने 'एआर' के पक्ष में अधिभोग अधिकार प्रदान किए गए। उच्च न्यायालय ने पाया कि इसके बावजूद, याचिकाकर्ताओं के पिता ने अधिकरण के आदेश की सत्यता पर सवाल नहीं उठाया। इसी आधार पर निचली अदालतों ने माना कि याचिकाकर्ताओं को 'एआर' के पक्ष में 'पीआर' द्वारा दी गई रियायत के बारे में जानकारी थी और उनके इस तर्क को खारिज कर दिया कि समझौता याचिका पर हस्ताक्षर करने तक उन्हें इसकी जानकारी नहीं थी। इसलिए, मुकदमे के लिए कार्रवाई का वादकारण केवल वर्ष 2004-05 में होना नहीं कहा जा सकता है जब उत्तरदाता संख्या 2 से 5 ने कथित तौर पर याचिकाकर्ताओं के कब्जे को परेशान करने का प्रयास किया। [पैरा 27 और 28] [956-सी-एच; 957-ए-सी]

2.1. दूसरे मुद्दे के संबंध में, हालांकि न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को हटाने का तुरंत अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, लेकिन कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961 की धारा 132(2) और 133(1)(i) के प्रावधानों से

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि ट्रिब्यूनल द्वारा तय किए जाने वाले मामलों में सिविल कोर्ट का अधिकार क्षेत्र, और ट्रिब्यूनल के फैसले पर सवाल उठाना 1961 अधिनियम की धारा 132 द्वारा खारिज कर दिया गया है। [पैरा 29] [957-0]

सरस्वती एवं अन्य। वी. लचन्ना (1994) 1 एससीसी 611; शिव कुमार चड्ढा बनाम. दिल्ली नगर निगम एवं अन्य। (1993) 3 एससीसी 161; स्वामी आत्मानंद एवं अन्य। वी श्री रामकृष्ण तपोवनम और अन्य। (2005) 10 एससीसी 51; सुधीर जी. अंगुर एवं अन्य बनाम एम. संजीव एवं अन्य। 2006 (1) एससीसी 141; जतिंदर सिंह और अन्य बनाम मेहर सिंह एवं अन्य। एआईआर 2009 एससी 354; बलव्वा और अन्य. बनाम हसनबी और अन्य। (2000) 9 एससीसी 272, केडी। शर्मा बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (2008) 12 एससीसी 481; मुदकप्पा बनाम रुद्रप्पा एआईआर 1994 एससी 1190 - संदर्भित।

2.2. सिविल या आपराधिक न्यायालय या अधिकारी या प्राधिकरण का क्षेत्राधिकार उन मामलों में समाप्त हो गया है जहां यह निर्णय लिया जाना था कि प्रश्न में भूमि कृषि भूमि है या नहीं और क्या दावा करने वाला व्यक्ति के 1 अप्रैल, 1974 से पहले कब्जे में कृषि भूमि है या नहीं उक्त भूमि पर कोई किरायेदार है या नहीं। वर्तमान मामले में, यह प्रश्न कि क्या 'एआर' एक अधिभोग किरायेदार था या नहीं और क्या 'पीआर' ने इस तरह के दावे के लिए अपनी सहमति दी थी, यह भूमि अधिकरण के

क्षेत्राधिकार में है और नीचे के न्यायालयों द्वारा यह सही माना गया है कि सिविल न्यायालय के पास इस तरह के प्रश्न पर विनिश्चय करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। जहां तक कपट का सवाल है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि कपट उसके अनुसरण में की गई सभी कार्रवाइयों को दूषित कर देती है। हालाँकि, मौजूदा मामले में, यह सुझाव देने के लिए कुछ भी नहीं है कि 'एआर' ने 'पीआर' के विरूद्ध कपट किया है, जिसने स्वेच्छा से प्रश्नगत भूमि पर अधिभोग अधिकार के लिए 'एआर' के दावे को स्वीकार कर लिया है। इस मामले को देखते हुए, उच्च न्यायालय के फैसले और आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है। [पैरा 30, 31 और 32) [958-ई-**एच; 959-ए-बी]**

केस कानून संदर्भ:

(1994)1scc 611	संदर्भित	Para 11
(1993)3scc 161	संदर्भित	Para 12
(2005)1o scc 51	संदर्भित	Para 13
2006 f1) scc 141	संदर्भित	Para 14
AIR 2009 SC 354	संदर्भित	Para 15
(2000)9scc *212*	संदर्भित	Para 16

एआईआर 1994 एससी 1190 पैरा 23 का हवाला दिया गया

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: एसएलपी (सिविल) 2009 की संख्या 6286

उच्च न्यायालय, कर्नाटक, बैंगलोर के आरएफए संख्या 845 ऑफ 2006 (पीएआर) में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 19.12.2008 से

राजू रामचन्द्रन, एस.एस. पद्मराज, शंकर दिवाते याचिकाकर्ताओं की ओर से

कैलाश वासुदेव, गिरीश अनंथमूर्ति, इमरान पाशा,वैजयंती गिरीश उत्तरदाताओं की ओर से

न्यायालय का निर्णय **अल्तमस कबीर, जे., द्वारा** सुनाया गया

1. एक डोड्डा अप्पन्ना रेड्डी के पास हलसाहल्ली थिप्पासंद्रा गांव, सरजापुरा होबली, अनेकल तालुक, बैंगलोर शहरी जिले में वृहद संपत्ति थी। अपने इकलौते बेटे, पिल्ला रेड्डी और पोते, एच. रमैया रेड्डी, जो यहां उत्तरदाता संख्या 1 हैं, को अपनी संपत्ति का उत्तराधिकारी बनाते हुए 1968 में उनकी मृत्यु हो गई यहां याचिकाकर्ता एच. रमैया रेड्डी के बेटे हैं।

2. अप्पन्ना रेड्डी की मृत्यु के बाद पिल्ला रेड्डी और एच. रामैया रेड्डी ने पैतृक संपत्तियों के संबंध में एक संयुक्त परिवार का गठन किया और वाद की अनुसूची की संपत्तियों सहित विभिन्न संपत्तियों के संयुक्त कब्जे में रहकर उपभोग किया।

3. वर्ष 1972 में पिल्ला रेड्डी और उनके बेटे एच. रमैया रेड्डी के बीच संयुक्त परिवार और पैतृक संपत्तियों के संबंध में संपत्तियों का बंटवारा हुआ। अनेकल तालुक में उप-रजिस्ट्रार कार्यालय में एक पेशेवर दस्तावेज़ लेखक, अन्नैया रेड्डी, पंजीकृत विभाजन विलेख का एक प्रमाणित गवाह था। पिल्ला रेड्डी ने वर्ष 1972 और वर्ष 1979 में अन्नैया रेड्डी द्वारा लिखित दो वसीयतें निष्पादित कीं। उक्त अन्नैया रेड्डी ने कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम 1961 की धारा 48 के तहत जिसे इसके बाद "1961 अधिनियम" के रूप में संदर्भित किया गया है, वाद की अनुसूची भूमि के संबंध में किरायेदारी अधिकार देने के लिए इस आधार पर अधिभोग अधिकारों का दावा करते हुए कि वह वाद की भूमि पर खेती कर रहा था, 30 दिसंबर, 1974 को एक आवेदन दायर किया, केवल पिल्ला रेड्डी को कार्यवाही में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था, जबकि, संपत्तियों को पैतृक संपत्ति कहा गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि 11 दिसंबर, 1975 को विचाराधीन भूमि के किरायेदारी अधिकार अन्नैया रेड्डी के नाम पर दर्ज किए गए थे।

4. वर्ष 1986 में, पिला रेड्डी की दूसरी पत्नी होने का दावा करने वाली सुनकम्मा ने पिल्ला रेड्डी की मृत्यु के बाद विभाजन का मुकदमा दायर किया, जिसमें उनकी विभिन्न संपत्तियों के बंटवारे और अलग कब्जे की मांग की गई। वर्ष 1996 में, अन्नैया रेड्डी ने कुछ जमीनें प्रतिवादी संख्या 2 से 5 के पक्ष में विक्रय कर दीं और जैसा कि याचिकाकर्ताओं ने

तर्क दिया, उन्हें अन्नैया रेड्डी के पक्ष में अधिभोग अधिकार दिए जाने के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उक्त मामला अंततः एच. रमैया रेड्डी द्वारा प्रस्तुत सिविल अपील संख्या 1348/2001 के माध्यम से इस न्यायालय में प्राप्त हुआ। उक्त अपील के लंबित रहने के दौरान, एच. रमैया रेड्डी और सुंकम्मा ने एक समझौता किया, जिसे दर्ज किया गया और अपील का निपटारा 26 अक्टूबर, 2004 के एक आदेश द्वारा किया गया। हालांकि, प्रतिवादी संख्या 2 से 5 ने अन्नैया रेड्डी से वाद भूमि की कथित खरीद के बल पर याचिकाकर्ताओं के कब्ज़े, को विचलित करने की कोशिश की। याचिकाकर्ताओं ने प्रधान सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग), बैंगलोर ग्रामीण, बेंगलुरु जिला, की अदालत में उपर्युक्त मुकदमा संख्या 1457/2005 दायर किया। अन्य बातों के अलावा, इस घोषणा के लिए कि वे दिवंगत डोड्डा अपन्ना रेड्डी के अविभाजित हिंदू संयुक्त परिवार के सहदायिक थे और निर्धारित संपत्तियों को सटीक सीमा रेखा के अनुसार विभाजित करने के लिए और वादीगण को अनुसूचित संपतियों में उनके वैध 1/4 हिस्से के अलग-अलग कब्जे में रखने के साथ साथ ही उन्होंने यह घोषणा करने के लिए भी प्रार्थना की कि भूमि अधिकरण, अनेकल तालुक द्वारा पारित 11 दिसंबर, 1975 का आदेश अवैध था और वादी और उनके विरासत अधिकार और अनुसूची संपत्तियों के स्वत्व पर बाध्यकारी नहीं था। एक और घोषणा की मांग की गई थी कि प्रतिवादी नंबर 2 से 4 के पक्ष में अन्नैया रेड्डी द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख अवैध थे और याचिकाकर्ताओं पर बाध्यकारी नहीं थे। उक्त राहत के साथ, याचिकाकर्ताओं

ने याचिकाकर्ताओं और प्रथम प्रतिवादी के संयुक्त नामों में अनुसूची संपत्तियों के संबंध में उत्परिवर्तन और राजस्व प्रविष्टियों को प्रभावित करने के लिए तहसीलदार, अनेकल तालुक को निर्देश देने के लिए एक बाध्यकारी निषेधाज्ञा की भी प्रार्थना की। परिणामिक अनुतोष के लिए भी प्रार्थना की गई।

5. उक्त मुकदमे में, याचिकाकर्ताओं ने मुकदमे का निर्णय करने के उद्देश्य से उत्तरदाताओं के खिलाफ अंतरिम निषेधाज्ञा देने की प्रार्थना की। विचारण न्यायालय ने 11 विवाघक और एक अतिरिक्त विवाघक तैयार किया। उक्त 12 विवाघक में से, छठा विवाघक था 'क्या मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था?' और अतिरिक्त विवाघक था 'क्या मुकदमा कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम की धारा 132(2) के मद्देनजर चलने योग्य था?'

6. विचारण न्यायालय ने उक्त दोनों विवाघको को प्रारंभिक विवाघको के रूप में सुनने का फैसला किया। पक्षों को सुनने के बाद, विचारण न्यायालय ने विवाघक संख्या 6 का उत्तर सकारात्मक और अतिरिक्त अंक संख्या 1 का नकारात्मक उत्तर दिया और माना कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था और कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961 की धारा 132(2) की रोक के मद्देनजर भी चलने योग्य नहीं था। इसके उक्त निष्कर्षों के मद्देनजर, विचारण न्यायालय ने वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया। विचारण न्यायालय के उक्त फैसले और डिक्री से व्यथित होकर, याचिकाकर्ताओं ने बैंगलोर में कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष नियमित प्रथम अपील संख्या

845 (पीएआर) 2006 को प्राथमिकता दी। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का समर्थन करते हुए अपील को भी खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ताओं का मुकदमा स्पष्ट रूप से परिसीमा के कारण और 1961 अधिनियम की धारा 132 (2) के आधार पर वर्जित था और सिविल न्यायालय के पास ग्रहण करने और सुनवाई का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।

7. यह आरएफए नंबर 845/2006 (पीएआर) में कर्नाटक उच्च न्यायालय के उक्त फैसले और आदेश के खिलाफ है जिसमें तत्काल अपील दायर की गई है।

8. याचिकाकर्ताओं की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राजू रामचन्द्रन द्वारा कथन किया गया कि चूंकि याचिकाकर्ता भूमि अधिकरण के समक्ष कार्यवाही में तीसरे पक्ष थे, इसलिए उसमें पारित आदेश उन्हें बाध्य नहीं करता था और भूमि अधिकरण के आदेशों के बावजूद विभाजन का मुकदमा वे अलग से दाखिल करने के हकदार थे। यह भी प्रस्तुत किया गया था कि चूंकि भूमि अधिकरण के समक्ष कार्यवाही कपट और मिलीभगत से निष्प्रभावी हो गई थी, इसलिए 1961 अधिनियम की धारा 132 (2) के तहत रोक हस्तगत मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगी और याचिकाकर्ताओं के अनुसार, चूंकि मुकदमा भूमि अधिकरण के आदेश और विक्रय संव्यवहार की जानकारी की तारीख से 3 साल की अवधि के भीतर

लाया गया था, इसलिए परिसीमा से बाधित नही था और विचारण न्यायालय ने इसे परिसीमा के आधार पर खारिज कर भूल की.

9. अपनी दलीलों के बारे में विस्तार से बताते हुए, श्री रामचन्द्रन द्वारा प्रस्तुत किया गया कि 1961 अधिनियम की धारा 45 के तहत एक कब्जेदार के रूप में पहचाने जाने और दर्ज होने के लिए, संबंधित व्यक्ति अधिनियम की धारा 48 के तहत गठित अधिकरण में आवेदन करने का हकदार होगा। और ऐसा प्रत्येक आवेदन कर्नाटक भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा (1) के प्रारंभ होने की तारीख से 6 महीने की अवधि की समाप्ति से पहले करना होगा।

श्री रामचंद्रन ने तर्क दिया कि धारा 48-ए(5) के तहत अधिकरण द्वारा की गई जांच अनिवार्य रूप से आवेदक के किरायेदारी के दावे के निर्धारण तक ही सीमित होनी चाहिए और ऐसी स्थिति में उपरोक्त अधिनियम की धारा 133(1)(i) के मद्देनजर सिविल या आपराधिक कार्यवाही के लंबित होने के दौरान ऐसा प्रश्न उठता है कोई भी सिविल या फौजदारी न्यायालय या अधिकारी इस प्रश्न का निर्णय करने का हकदार नहीं होगा कि ऐसी भूमि कृषि भूमि थी या नहीं और कब्जे का दावा करने वाला व्यक्ति 1 मार्च, 1974 से पहले से वाद भूमि का किरायेदार है या नहीं।

10. कर्नाटक भूमि सुधार नियम, 1977 (इसके बाद '1974 नियम' के रूप में संदर्भित) के नियम 17 का भी संदर्भ दिया गया, जो 1961 की

धारा 34 के तहत एक संक्षिप्त जांच के संबंध में अधिकरण द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रिया को निर्धारित करता है। यह तर्क दिया गया कि चूंकि प्रक्रिया प्रकृति में संक्षिप्त थी, कपट से संबंधित प्रश्न या याचिकाकर्ताओं के दादा द्वारा दी गई रियायत की वैधता केवल सिविल न्यायालय द्वारा ही सुनी जा सकती है, न कि अधिकरण के समक्ष संक्षिप्त कार्यवाही में। श्री रामचन्द्रन द्वारा प्रस्तुत किया कि मुकदमे की रूपरेखा से यह स्पष्ट होगा कि धारा 48-ए के तहत विचार किया गया ऐसा कोई भी प्रश्न मुकदमे में शामिल नहीं था, कि याचिकाकर्ता स्वर्गीय डोड्डा अप्पन्ना रेड्डी के अविभाजित हिंदू संयुक्त परिवार के सहदायिक थे। अनुसूचित संपत्ति का निश्चित सीमा रेखा द्वारा विभाजन और वादी को अनुसूचित संपत्तियों में से प्रत्येक के वैध 1/4 हिस्से के अलग-अलग कब्जे में रखने के लिए अनिवार्य रूप से घोषणा करने के लिए था, यह घोषित करने के लिए एक और प्रार्थना की गई कि भूमि अधिकरण, अनेकल तालुक द्वारा मामला संख्या एलआरएफ/ए.टी.सी./154/75-76 में पारित दिनांक 11 दिसंबर, 1975 का आदेश अवैध था और याचिकाकर्ताओं और उनके विरासत अधिकारों और अनुसूचित संपत्तियों के स्वामित्व पर बाध्यकारी नहीं था। एक और घोषणा की मांग की गई थी कि स्वर्गीय अन्नैया रेड्डी द्वारा प्रतिवादी नंबर 2 से 4 के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख एक दिखावटी लेनदेन था और याचिकाकर्ताओं पर बाध्यकारी नहीं था।श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया कि अधिकरण उक्त प्रश्नों को निर्धारित करने में सक्षम नहीं है, जिसका निर्णय केवल सिविल न्यायालय द्वारा किया जा सकता है।

11. अपनी उपरोक्त दलीलों के समर्थन में, श्री रामचन्द्रन ने सबसे पहले सरस्वती एवं अन्य बनाम लचन्ना [(1994) 1 एससीसी 611], मामले में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। जिसमें एपी (तेलंगाना क्षेत्र) किरायेदारी और कृषि भूमि अधिनियम, 1950 में एक समान प्रावधान, जहां सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को वर्जित कर दिया गया था, विचारार्थ लिया गया और यह माना गया कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, सिविल न्यायालय में दायर एक सूदखोरी बंधक के मोचन से संबंधित मुकदमा वर्जित नहीं था और चलने योग्य था। इस न्यायालय ने माना कि किसी मुकदमे पर विचार करने की सिविल न्यायालय की शक्ति पर रोक का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, जहां क़ानून कोई अधिकार नहीं बनाता है या अधिकार बनाने के बाद ऐसे अधिकार से उत्पन्न किसी भी विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए एक मंच प्रदान नहीं करता है।

12. श्री रामचन्द्रन ने शिव कुमार चड्ढा बनाम दिल्ली नगर निगम एवं अन्य [(1993) 3 एससीसी 161], के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का भी उल्लेख किया। जहां उसी सिद्धांत को दोहराया गया था और यह माना गया था कि न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में इस सवाल पर विचार करना कि क्या आदेश न्यायिक त्रुटि के कारण अमान्य था, वर्जित नहीं था।

13. स्वामी आत्मानंद और अन्य बनाम श्री रामकृष्ण तपोवनम और अन्य। [(2005) 10 एससीसी 51], के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का भी संदर्भ दिया गया था। जहां तमिलनाडु मान्यता प्राप्त निजी स्कूल (विनियमन) अधिनियम, 1973 के तहत स्वामित्व पर विवाद को अधिनियम की धारा 53 के तहत वर्जित करने का दावा किया गया था। इस न्यायालय ने माना कि ऐसा विवाद ऐसा नहीं है जिसे पूर्वोक्त अधिनियम के प्रावधानों के तहत तय करने की आवश्यकता है, और तदनुसार, सिविल प्रक्रिया की धारा 9 के संदर्भ में सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को बाहर नहीं किया गया है। इस बात पर जोर दिया गया कि सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को आसानी से हटाने का तुरंत अनुमान नही लगाया जा सकता हैा

14. श्री रामचन्द्रन ने अंततः सुधीर जी. अंगुर एवं अन्य बनाम एम. संजीव एवं अन्य। [2006 (1) एससीसी 141], मामले में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। जिसमें, मैसूर धार्मिक और धर्मार्थ संस्थान अधिनियम, 1927 के प्रावधानों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार के संबंध में माना कि ट्रस्ट की संपतियों में जालसाजी, कपट और व्यपर्वतन के गंभीर आरोपों वाले मामलों के संबंध में संक्षिप्त तरीके से जांच नहीं की जा सकती और केवल न्यायालय ही इसकी जांच कर सकता है।

15. परिसीमा के प्रश्न पर, श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने पिल्ला रेड्डी द्वारा दी गई सहमति की कपटपूर्ण प्रकृति पर विचार किए बिना परिसीमा के प्रश्न पर निर्णय लेने में गलती की, हालांकि, उनके पास इस पर कोई स्वतंत्र अधिकार या स्वामित्व नहीं था संपत्ति को अन्नैया रेड्डी के पक्ष में अधिभोग अधिकार देने के लिए सहमति देनी होगी। श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने उस संबंध में साक्ष्य लिए बिना मुकदमे को परिसीमा द्वारा बाधित मानकर गलती की। उपरोक्त निवेदन के समर्थन में, श्री रामचन्द्रन ने जतिंदर सिंह एवं अन्य बनाम मेहर सिंह और अन्य [एआईआर 2009 एससी 354], । मामले में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। जिसमें इस न्यायालय ने दूसरी अपील पर फैसला करते समय आदेश 41 नियम 27 सीपीसी के तहत अपीलकर्ता द्वारा दायर एक आवेदन पर ध्यान देने में विफल रहने के लिए उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया। इस न्यायालय ने माना कि जब ऐसा कोई आवेदन लंबित था, तो यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य था कि वह गुण-दोष के आधार पर उससे निपटे और ऐसा नहीं किए जाने पर, उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं था और आदेश 41 नियम 27 सीपीसी के तहत आवेदन पर विचार करने के बाद दूसरी अपील में नए सिरे से निर्णय के लिए अपील को प्रेषित किया गया।

16. इसी संदर्भ में, बलवा और अन्य बनाम हसनबी और अन्य। [(2000) 9 एससीसी 272], में इस न्यायालय के एक बाद के फैसले का भी संदर्भ दिया गया जिसमें कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम, 1961 के मद्देनजर सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को हटाने का सवाल विचाराधीन था। इस न्यायालय ने माना कि सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र को केवल उस संबंध में बाहर किया गया है। जहां की विशेष संविधि के तहत अनुतोष विशेष अधिकरण द्वारा ही प्रदान किये जा सकते हो लेकिन अन्य मामलों में सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को बाहर नहीं किया गया था।

17. श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया कि 1961 अधिनियम की धारा 133 (2) के तहत परिकल्पित सिविल न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित प्रारंभिक विवादक का निर्णय भूमि की प्रकृति के साक्ष्य के बिना नहीं किया जा सकता था। श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय का आदेश विचार करने योग्य नहीं है और इसे रद्द किये जानें योग्य हैं

18. दूसरी ओर, प्रतिवादी नंबर 1 की ओर से उपस्थित होते हुए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कैलाश वासुदेव ने प्रधान सिविल जज (सीनियर डिवीजन), बैंगलोर ग्रामीण जिला, बैंगलोर की अदालत में आर. रवींद्र रेड्डी द्वारा दायर 2005 के ओएस नंबर 1457 के वादपत्र को इंगित किया कि उक्त अन्नैया रेड्डी द्वारा वादीगण को उनके अधिकार और अनुसूचित संपत्तियों में हिस्सेदारी से वंचित करने के लिए कपट किया गया। श्री

वासुदेव ने बताया कि उसी क्रम में यह भी स्वीकार किया गया था कि पिल्ला रेड्डी ने वादीगण की जानकारी और सहमति के बिना स्वर्गीय अन्नैया रेड्डी के पक्ष में किरायेदारी अधिकार देना स्वीकार कर लिया था। श्री वासुदेव ने प्रस्तुत किया कि अन्नैया रेड्डी के पक्ष में किरायेदारी अधिकार देने के लिए उनके दादा, पिल्ला रेड्डी द्वारा वादी की सहमति प्राप्त करने का सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि उनके पास उक्त भूमि के संबंध में किरायेदारी अधिकार थे।

19. श्री वासुदेव ने वादपत्र के पैराग्राफ 16 का भी उल्लेख किया जहां यह कहा गया था कि मुकदमे के लिए वाद कारण जनवरी 2005 में उत्पन्न हुआ था क्योंकि वादी/ उत्तरदाता लगातार विभाजन और अनुसूचित संपत्तियों में अपने हिस्से के अलग कब्जे की मांग कर रहे थे और इसमें याचिकाकर्ता विभाजन को प्रभावित करने में विफल रहे, लेकिन अन्य उत्तरदाता अतिक्रमण/हस्तक्षेप सहित उत्तरदाता संख्या 1 के कब्जे और उपभोग में अतिक्रमण के प्रयास जारी रखे हुए थे।

20. श्री वासुदेव द्वारा भूमि अधिकरण, बैंगलोर जिला, अनेकल तालुक के समक्ष 11 दिसंबर, 1975 के मामले संख्या एलआरएफ/ए.टी.सी./154/75-76 में चल रही कार्यवाही को हमारे ध्यान में लाया, जिसमें याचिकाकर्ता को एम अन्नैया रेड्डी के रूप में दिखाया गया था और एच. पिल्ला रेड्डी को उत्तरदाता के रूप में दिखाया गया था।

1961 अधिनियम की धारा 48-ए के तहत कार्यवाही में, एम. अन्नैया रेड्डी द्वारा दायर आवेदन का निपटारा निम्नलिखित आदेश द्वारा किया गया: -

"उपर्युक्त सभी Sy. नग भूमि हलसाहल्ली थिप्पससंद्रा गांव, सरजापुरा होबली में स्थित है। याचिकाकर्ता उपर्युक्त Sy नग भूमि में अधिभोग अधिकार का दावा करता है और दिनांक 30.12.74 के आदेश की प्रति प्रस्तुत की। जांच की तारीख 11.12.75 तय की गई थी और उसी दिन जांच आयोजित की गई थी और प्रतिवादी इस बात पर सहमत था कि याचिकाकर्ता द्वारा उपर्युक्त Sy नग भूमि में अधिभोग अधिकारों का दावा किया गया था। इसलिए ट्रिब्यूनल के सभी सदस्यों ने सर्वसम्मति से याचिकाकर्ता और प्रतिवादी के तर्क को स्वीकार कर लिया और उपरोक्त उल्लिखित भूमि की सीमा तक कब्जे के अनुसार याचिकाकर्ता के पक्ष में अधिभोग अधिकार देने का निर्णय लिया है।

21. श्री वासुदेव ने प्रस्तुत किया कि उक्त आदेश से यह बिल्कुल स्पष्ट होगा कि पिल्ला रेड्डी एम. अन्नैया रेड्डी द्वारा अधिभोग अधिकारों के दावे पर सहमत हुए थे। इसके अलावा, एच. पिल्ला रेड्डी द्वारा इस तरह के आदेश पर कभी भी कपटपूर्वक या कपटपूर्वक तरीकों से प्राप्त होने पर सवाल नहीं उठाया गया था।

22. श्री वासुदेव ने के.डी. शर्मा बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड [(2008) 12 एससीसी 481] में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया। जिसमें न्यायालय में किये गये कपट से संबंधित मुद्दे पर

विस्तार से विचार किया गया था और यह माना गया था कि न्यायालय में किया गया कपटपूर्वक व्यवहार सभी न्यायिक कृत्यों को विफल कर देगा क्योंकि कपट किसी दूसरे का अनुचित लाभ उठाकर कुछ हासिल करने के इरादे से किया गया जानबूझकर किया गया धोखा है।

23. श्री वासुदेव ने मुदकप्पा बनाम रुद्रप्पा [एआईआर 1994 एससी 1190] में इस न्यायालय के फैसले का भी उल्लेख किया, जिसमें इस न्यायालय ने माना था कि कर्नाटक भूमि सुधार अधिनियम के तहत अधिकरण इस सवाल पर निर्णय लेने का हकदार है कि क्या संयुक्त परिवार या उसका कोई सदस्य विचाराधीन भूमि के संबंध में किरायेदार था और ऐसा निर्णय संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत समीक्षा के अधीन था।

24. श्री वासुदेव ने प्रस्तुत किया कि चूंकि उत्तरदाता संख्या 1 की ओर से वाद के चलनें के संबंध में की गई प्रारंभिक आपत्तियों को धारा 133(1)(i) और (2) 1961 के अधिनियम और परिसीमा की रोक के अनुसार विधिवत स्वीकार कर लिया गया था। उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी।

25. जैसा कि यहां पहले उल्लेख किया गया है, 11 विवाघक और विचारण न्यायालय द्वारा तैयार किए गए अतिरिक्त विवाघक में से विवाघक नंबर 6 और 1961 अधिनियम की धारा 132(2) के मद्देनजर सीमा और रखरखाव की बाधा से संबंधित अतिरिक्त विवाघक प्रारंभिक विवाघक के

रूप में विचार के लिए लिया गया। वस्तुतः उक्त दोनों विवाघक पर निर्णय के मद्देनजर किसी अन्य विवाघक पर न तो विचार किया गया और न ही निर्णय लिया गया। इसलिए, इस याचिका में हमारी जांच केवल उक्त दो विवाघको तक ही सीमित है।

26. ट्रायल कोर्ट ने विवाघक संख्या 6 में सकारात्मक और अतिरिक्त मुद्दे नंबर 1 में नकारात्मक धारणा के साथ अभिनिर्घारत किया कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था और 1961 अधिनियम की धारा 132 (2) की रोक के मद्देनजर चलने योग्य नहीं था। हमने दोनों विवाघक के संबंध में संबंधित पक्षों की ओर से दी गई दलीलों पर विचार किया है और हम उक्त दो विवाघक पर विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से सहमत हैं।

27. जहां तक परिसीमा का प्रश्न है, भूमि अधिकरण, अनेकल का आदेश 11 दिसंबर, 1975 को पारित किया गया था, जबकि याचिकाकर्ताओं द्वारा वे संपत्तियाँ जो ट्रिब्यूनल के आदेश की विषय वस्तु थीं, उस संबंध में वर्ष 2005 में घोषणा, विभाजन और स्थायी निषेधाज्ञा की मांग करते हुए मुकदमा दायर किया गया था। उक्त मुकदमे को परिसीमा की अवधि के भीतर लाने का प्रयास यह इंगित करके किया गया है कि प्रतिवादी क्रमांक 2 से 5 ने वाद की भूमि को अन्नैया रेड्डी से कथित खरीद के आधार पर वर्ष 2004-05 के दौरान याचिकाकर्ताओं के कब्जे को परेशान करने की कोशिश की थी। यह आग्रह करने की मांग की गई थी कि पिल्ला रेड्डी ने

याचिकाकर्ताओं की जानकारी और सहमति के बिना, अधिकरण के समक्ष अधिभोग अधिकार प्राप्त करने के उत्तरदाताओं के दावे को स्वीकार कर लिया था। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने मामले के इस पहलू पर विचार किया और पाया है कि यह रिकॉर्ड पर था कि अन्नैया रेड्डी द्वारा भूमि अधिकरण के समक्ष कार्यवाही की सूचना गांव में दायर आवेदन के संबंध में दी गई थी। यह भी रिकॉर्ड में है कि याचिकाकर्ताओं के पिता भूमि अधिकरण के आदेशों से भली-भांति परिचित थे क्योंकि 1986 के ओएस नंबर 75 में उन्होंने एक विशिष्ट रुख अपनाया था कि वाद संपत्तियों में से एक, सर्वे नंबर 46, एक किराए की संपत्ति, और भूमि अधिकरण अनेकल ने एम. अन्नैया रेड्डी के पक्ष में अधिभोग अधिकार प्रदान किए थे।

उच्च न्यायालय ने कहा कि इसके बावजूद, याचिकाकर्ताओं के पिता ने अधिकरण के आदेश की सत्यता पर सवाल नहीं उठाया। इस आधार पर निचली अदालतों ने माना कि याचिकाकर्ताओं को पिल्ला रेड्डी द्वारा अन्नैया रेड्डी के पक्ष में दी गई रियायत के बारे में जानकारी थी और उनके इस तर्क को खारिज कर दिया कि जब तक उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष 1986 के ओएस नंबर 75 से उत्पन्न अपील में समझौता याचिका पर हस्ताक्षर नहीं किए, तब तक उन्हें इसकी जानकारी नहीं थी।

28. इसलिए, हम श्री रामचंद्रन की दलीलों को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि मुकदमे के लिए वाद कारण केवल वर्ष 2004-05 में

उत्पन्न हुआ जब उत्तरदाता संख्या 2 से 5 ने कथित तौर पर याचिकाकर्ताओं के कब्जे को परेशान करने का प्रयास किया।

29. जहां तक दूसरे मुद्दे का सवाल है, हालांकि न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को हटाने का तुरंत अनुमान नहीं लगाया जा सकता है, यह 1961 अधिनियम की धारा 132(2) और 133(1)(i) के प्रावधानों से बिल्कुल स्पष्ट है। अधिकरण द्वारा तय किए जाने वाले मामलों में सिविल न्यायालय का अधिकार क्षेत्र, और अधिकरण के फैसले पर सवाल उठाना, 1961 अधिनियम की धारा 132 द्वारा खारिज कर दिया गया है जो इस प्रकार है: -

"132. क्षेत्राधिकार का वर्जन - (1) किसी भी सिविल न्यायालय के पास किसी भी प्रश्न को निपटाने, निर्णय लेने या निपटने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा, जिसे इस अधिनियम की धारा 77 की उप-धारा (1) के तहत अधिकृत अधिकारी, उपायुक्त द्वारा निपटाने, निर्णय लेने या निपटाए जाने का प्रावधान है। धारा 83 के तहत सहायक आयुक्त, अधिकरण, तहसीलदार, कर्नाटक अपीलीय अधिकरण या राज्य सरकार जहां अपनी नियंत्रण की शक्तियों का प्रयोग करते हुए कार्य करते हैा

(2) उपायुक्त, धारा 77 की उपधारा (1) के तहत अधिकृत अधिकारी, सहायक आयुक्त, धारा 83 के तहत विहित अधिकारी, अधिकरण, तहसीलदार, कर्नाटक अपीलीय अधिकरण या राज्य सरकार के किसी

आदेश को, जो कि इस अधिनियम के अनुसरण में किया गया है। किसी दीवानी अथवा अपराधिक न्यायालय में प्रश्नगत नही किया जाऐगा

इसके अलावा, अधिनियम की धारा 133(1)(i) और (2) इस प्रकार हैं:-

"133. मुकदमे, कार्यवाही इत्यादि, जिनमें अधिकरण द्वारा निर्णय लेने के लिए आवश्यक प्रश्न शामिल हैं।-

(1) तत्समय प्रवृत्त किसी भी कानून में किसी बात के होते हुए भी

(i) कोई भी सिविल या फौजदारी अदालत या अधिकारी या प्राधिकारी, किसी भूमि से संबंधित किसी भी मुकदमे, मामले या कार्यवाही में यह सवाल तय नहीं करेगा कि क्या ऐसी भूमि कृषि भूमि है या नहीं और क्या भूमि 1 मार्च, 1974 से पहले दावेदार के कब्जे में है या किरायेदार है या नहीं

(ii) X X X

(ii) X X X

(iii) X X X

(2) उपधारा (1) में कुछ भी सिविल या आपराधिक अदालत या अधिकारी या प्राधिकारी को उस उपधारा में निर्दिष्ट मामले के अलावा किसी अन्य मामले के संबंध में मुकदमा, मामले या कार्यवाही में आगे बढ़ने से नहीं रोकेगा।

30. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि सिविल या आपराधिक न्यायालय या अधिकारी या प्राधिकरण का क्षेत्राधिकार उन मामलों में समाप्त हो गया है जहां यह निर्णय लिया जाना था कि प्रश्न में भूमि कृषि भूमि है या नहीं और क्या दावा करने वाला व्यक्ति के 1 अप्रैल, 1974 से पहले कब्जे में कृषि भूमि है या नहीं उक्त भूमि पर कोई किरायेदार है या नहीं। वर्तमान मामले में, सवाल यह है कि क्या अन्नैया रेड्डी एक अधिभोग किरायेदार था या नहीं और क्या पिल्ला रेड्डी द्वारा इस तरह के दावे के लिए दी सहमति भूमि अधिकरण के क्षेत्राधिकार में है और नीचे के न्यायालयों द्वारा यह सही ढंग से माना गया है कि सिविल न्यायालय के पास इस तरह के प्रश्न पर निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।

31. जहां तक कपट का सवाल है, यह निस्संदेह सच है, जैसा कि श्री रामचन्द्रन ने प्रस्तुत किया है, कि कपट अनुसार की गई सभी कार्रवाइयां दूषित हो जाती है और लॉर्ड डेनिंग के शब्दों में 'कपट सब कुछ विखण्डित कर देता है'।

हालाँकि, मौजूदा मामले में, रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जो बताता हो कि अन्नैया रेड्डी ने पिल्ला रेड्डी के साथ कोई कपट किया हो, जिसने स्वेच्छा से विचाराधीन भूमि पर अधिभोग अधिकार के लिए अन्नैया रेड्डी के दावे को स्वीकार कर लिया।

32. मामले को देखते हुए, हमें इन कार्यवाहियों में दिये गए उच्च न्यायालय के फैसले और आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं

दिखता है और तदनुसार, विशेष अनुमति याचिका खारिज कर दी जाती है।

33. हालाँकि, खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जा रहा है।

डी. जी. विशेष अनुमति याचिका खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कुलदीप सुतराकर (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।